लोककथाओं में मानव और मानवेतर जीव संबंध
एक शिक्षणशास्त्रीय विवेचना[1]

शुभम कुमार पति*
ऋषभ कुमार मिश्र**

इस शोधपत्र में लोककथाओं को शिक्षणशास्त्रीय सामग्री मानते हुए झारखंड, ओडिशा और छत्तीसगढ़ में रहने वाले मुंडा, हो, धुरवा और संथाल आदिवासी समुदायों की चयनित लोककथाओं और विषयवस्तु का विश्लेषण किया गया। इस कार्य के लिए उत्तरमानवतावादी (पोस्ट ह्यूमनिज्म) सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य का उपयोग किया गया। यह परिप्रेक्ष्य मनुष्यों द्वारा मानवेतर जीवों और वस्तुओं को व्याख्यायित करने के मानव सर्वोच्चतावादी दृष्टिकोण को चुनौती देते हुए इनकी स्वायत्त सत्ता को पुनर्परिभाषित करने की वकालत करता है। उक्त सैद्धांतिक पृष्ठभूमि के आलोक में यह शोधपत्र लोककथाओं में मानव और मानवेतर जीवों के संबंध को विश्लेषित करता है तथा शिक्षण के लिए इसके निहितार्थों पर प्रकाश डालता है। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' में बच्चों को जीवनपर्यंत अधिगमकर्ता के रूप में परिकल्पित किया गया है। इस नीति में यह सैद्धांतिक स्वीकृति है कि मनुष्य जीवनपर्यंत अपने व्यावहारिक अनुभवों, क्रियाकलापों और गतिविधियों से सीखता है। वह अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में स्थित मानवीय एवं गैर-मानवीय संसाधनों के साथ अंतःक्रिया के आधार पर ज्ञान का निर्माण करता है। ज्ञान निर्माण की इस प्रक्रिया में लोककथाओं जैसे सामाजिक-सांस्कृतिक साधन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' में इन सांस्कृतिक संसाधनों को विद्यालयी अनुभवों के साथ एकीकृत करने की अनुशंसा की गई है। इसे ध्यान में रखते हुए शोधपत्र में लोककथाओं को विवेच्य सामग्री बनाते हुए उनके शिक्षणशास्त्रीय महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

प्राचीन काल से ही विभिन्न समुदायों में लोग कलात्मक-रचनात्मक गतिविधियों के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में अपने पारंपरिक ज्ञान, परंपरा, विश्वास और मतों को पोषित एवं स्थानांतरित करते आ रहे हैं। ज्ञान सृजन एवं स्थानांतरण की इस प्रक्रिया में लोककथाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। लोककथाएँ समुदाय में सामाजिक एवं सांस्कृतिक अंतःक्रिया तथा प्रदर्शन से निर्मित एवं संप्रेषित होती हैं। (एलविन, 2008; बेन-अमोस, 1971) ये सृजन, संचार तथा प्रदर्शन की पारस्परिक संवादात्मक तथा गतिशील प्रक्रिया को दर्शाती हैं। (गुप्ता 2018; सिम्स तथा स्टीफंस, 2005) लोककथाओं

* *शोधार्थी*, शिक्षा संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
** *असिस्टेंट प्रोफेसर*, शिक्षा संकाय, लोधी रोड परिसर, डॉ. बी. आर. अंबेडकर विश्वविद्यालय दिल्ली

[1] यह शोधपत्र भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद् द्वारा वित्त पोषित शोध परियोजना का अंग है।

में सामाजिक व्यवहार के प्रतिमान, स्वस्थ जीवन के प्रति रणनीतियाँ, पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण, सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य, मानवाधिकार तथा कर्तव्य और समस्या समाधान कौशल जैसे तत्व निहित होते हैं। (कासिमोवा और अन्य 2020) इन्हीं विशेषताओं के कारण संस्कृति स्पंदित शिक्षणशास्त्र की परंपरा में लोकाख्यानों का उपयोग शैक्षिक संसाधन के रूप में किया जाता है, जिससे विद्यार्थी जीवन कौशलों के विकास के साथ-साथ अपने सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ के साथ जुड़ाव को महसूस करता है। इस जुड़ाव के लिए अधिकांशतः उन लोककथाओं को सुनाया जाता है, जिनमें मनुष्य का वनस्पति और पशु जगत के साथ 'मानवीकरण' आधारित संबंध होता है, जिसकी रचना करने वाला भी मनुष्य है। लोककथाओं में मानव अपने परिवेश से जीव-जंतु तथा वनस्पतियों का मानवीकरण करता है। इस प्रकार लोककथाओं में दो तरह के पात्र होते हैं—मानव और मानवेतर। जब लोककथाओं को एक शिक्षणशास्त्रीय उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, तब इसके द्वारा विद्यार्थियों को मानव और मानवेतर जीव जगत के संबंध का भी बोध कराया जाता है। चूँकि लोककथाएँ अधिकतर स्थानीय पर्यावरणीय और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में रची-बसी होती हैं। इनके कथानक में प्रकृति-मनुष्य के सहसंबंध पर आधारित पात्र एवं घटनाक्रम होते हैं। अतः इसके द्वारा सुनने और सुनाने वाले प्रकृति-मनुष्य के संदर्भ में प्रत्यक्ष व प्रच्छन्न संदेश (डायरेक्ट एंड हिडन मैसेज) ग्रहण करते हैं। इन संदेशों की प्रकृति दो प्रश्नों पर निर्भर करती है। प्रथम, लोककथाओं में प्रकृति-मनुष्य के संबंधों की प्रस्तुति कैसे की गई है? द्वितीय, इसे एक शिक्षणशास्त्रीय माध्यम के रूप में कैसे सुनाया जा रहा है? इस शोधपत्र में आदिवासी लोककथाओं को केंद्र में रखते हुए इन्हीं प्रश्नों को संबोधित करने का प्रयास किया गया है।

शोध उद्देश्य और विधि

इस शोधपत्र में लोककथाओं में मानव और मानवेतर जीव संबंधों की शिक्षणशास्त्रीय विवेचना करने के लिए दक्षिण-पूर्व भारत तथा मध्य-पूर्व भारत (झारखंड, ओडिशा और छत्तीसगढ़) में रहने वाले मुंडा, हो, धुरवा और संथाल आदिवासी समुदायों की लोककथाओं का प्रदत्त के रूप में सोद्देश्य चयन किया गया। उक्त चारों जनजातियाँ प्रकृति के साथ सहजीवन का सांस्कृतिक प्रतिमान प्रस्तुत करती हैं। मुंडा समुदाय प्रमुख रूप से 'छोटानागपुर का पठार' क्षेत्र में निवास करता है, जिसमें झारखंड, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़ और छत्तीसगढ़ से सटे हुए मध्य प्रदेश के कुछ सीमावर्ती क्षेत्र सम्मिलित हैं। मुंडा समुदाय में 'कुल' या 'वंश' की परंपरा है। जिसमें 'कुल' या 'वंश' का नाम किसी मनुष्य से संबंधित न होकर पशु, पक्षी, पेड़-पौधे, अनाज की प्रजाति तथा प्राकृतिक उत्पादों से प्रेरित है। (हुडा, 2021) हो समुदाय सिंहभूम क्षेत्र (ब्रिटिशकालीन भारत में बंगाल प्रेसीडेंसी के छोटानागपुर परगना का एक जिला) में निवास करती है, जिसमें झारखंड से राँची, कोल्हान प्रमंडल, ओडिशा से क्योंझर, मयूरभंज, बोनाई तथा गंगपुर सम्मिलित हैं। हो समुदाय में साल तथा सागवान वृक्ष का धार्मिक, पर्यावरण तथा उत्पादन की दृष्टि से विशेष महत्व है। संथाल समुदाय विशेषतः झारखंड, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में निवास करता है। भारत के छत्तीसगढ़ तथा ओडिशा राज्य में धुरवा समुदाय का प्रमुख निवास स्थल है।

यह समुदाय भोजन के लिए प्रमुख रूप से प्राकृतिक उत्पादों पर आश्रित है।

मुंडा, हो और संथाल समुदाय द्वारा कुछ त्योहार जैसे सरहुल या बाहा, करम या करमा तथा सोहराई मनाए जाते हैं। 'सरहुल' त्योहार को झारखंड के जनजातियों का नववर्ष भी कहा जाता है। इसे हो और मुंडा समुदाय द्वारा 'फूलों का त्योहार' से भी संबोधित किया जाता है। 'करम' त्योहार में फसल के अच्छे उत्पादन हेतु करम पेड़ की पूजा की जाती है। (सोहराई) त्योहार में पशुओं की पूजा की जाती है तथा फसल के अच्छे उत्पादन के बाद फसल का कुछ अंश प्रकृति को समर्पित करके यह उत्सव मनाया जाता है। स्पष्ट है कि ये जनजातियाँ पारंपरिक रूप से प्रकृति पर आश्रित हैं, क्योंकि इनके त्योहार, भोजन, आस्थाएँ, परंपराएँ तथा आधारभूत गतिविधियाँ प्रकृति पर आधारित हैं। इन जनजातियों में प्राकृतिक उपचार के रूप में इमली, हल्दी तथा बुखार होने पर काढ़ा जैसे स्वनिर्मित प्राकृतिक दवाइयों का प्रयोग किया जाता है। असन, महुआ, कुसुम, सोरगी, कोरोंज जैसे पेड़ का प्रयोग दातुन तथा पत्ते के रूप में किया जाता है, वहीं बाँस, साल तथा सागवान जैसे पेड़ों का उपयोग कच्चे घर के छत का रोला बनाने, कलाकारी या कलात्मक उत्पाद बनाने तथा लकड़ी से बने घर की अन्य वस्तुओं को बनाकर उपयोग करने या बेचने के लिए होता है। इनके भौगोलिक पारिस्थितिकी में फल के रूप में आम, अमरुद, जामुन और कटहल के पेड़ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। ओडिशा, झारखंड, पश्चिम बंगाल तथा छत्तीसगढ़ में मानवेतर जैविक प्रजाति के रूप में हाथी, बाघ, सियार, गैंडा, हिरण, लकड़बग्घा, सांभर, तोता, कोयल, मैना, गोरैया आदि प्रमुख रूप से पाए जाते हैं। चयनित लोककथाओं में इन मानवेतर प्रजातियों, पारिस्थितिकी तथा प्राकृतिक विशेषताओं का संदर्भ देखा जा सकता है।

इस शोधपत्र में उपर्युक्त जनजातियों की लोककथाओं के संदर्भ हेतु राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा प्रकाशित *भारत के आदिवासी क्षेत्रों की लोककथाएँ* (2009) संग्रह की सहायता ली गई है। इस संग्रह से 'हिरणी का छउवा', 'राजा चला स्वर्ग की ओर', 'चिड़ियों से मित्रता' तथा 'तोता और राजा' कथाओं का चयन किया गया था (तालिका 1)। इन सभी लोककथाओं में प्रतिनिधि पात्र के रूप में मनुष्य और पशु हैं। इन लोककथाओं का विषयवस्तु विश्लेषण विधि द्वारा निर्वचन करते हुए निम्नलिखित उद्देश्यों को संबोधित किया गया —

लोककथाओं में मानव-मानवेतर जीव संबंधों की प्रस्तुति की व्याख्या करना

शिक्षणशास्त्रीय माध्यम के रूप में लोककथाओं के निहितार्थ की विवेचना करना।

तालिका 1 — चयनित लोककथाओं का परिचय

क्र. सं.	समुदाय	लोककथा का शीर्षक
1.	मुंडा लोककथा	हिरणी का छउवा
2.	हो लोककथा	राजा चला स्वर्ग की ओर
3.	धुरवा लोककथा	चिड़ियों से मित्रता
4.	संथाल लोककथा	तोता और राजा

(यह शोध अध्ययन तालिका 1 में उल्लेखित आदिवासी लोककथाओं के अध्ययन तथा लोककथाओं में मानव-मानवेतर जीव संबंध के विश्लेषण तक ही सीमित था।)

चयनित लोककथाओं का सार

मुंडा लोककथा 'हिरणी का छउवा' के केंद्र में हिरणी की कथा है। वह संयोगवश एक मनुष्य के बच्चे (छउवा) को जन्म देती है, जो उसी राज्य के राजा विक्रमादित्य की संतान है। कालांतर में वह हिरणी जंगल के परिवेश में उस मानवरूपी बच्चे का लालन-पालन करती है और उसमें मानवीय व्यवहार एवं गुणों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वह उस बच्चे को भरण-पोषण के लिए भीख माँगना भी सिखाती है। राजा को जब यह पता चलता है कि यह छउवा स्वयं को राजा की संतान बताता है तो वह सच जानने के लिए छउवे को कैद कर लेता है। हिरणी अपने छउवे को खोजते हुए राजा के पास जाती है और प्रतिरोध करते हुए राजा से छउवे को कैद करने का कारण पूछती है। इसके उपरांत हिरणी राजा को सारी घटना समझाते हुए छउवे को राजा की ही संतान बताती है। अंत में, राजा हिरणी को अपनी पत्नी के रूप में और छउवे को अपनी संतान के रूप में स्वीकार करता है।

हो लोककथा 'राजा चला स्वर्ग की ओर' एक जुलाहे पर केंद्रित है, जो अपने प्राण की रक्षा के लिए राजा के अटपटे आदेशों का पालन करता है। पहले आदेश के अनुसार जुलाहे को 30 सियारों के कटे हुए सिर और दूसरे आदेश के अनुसार शेरनी का दूध लाने का दायित्व सौंपा जाता है। पहले आदेश का पालन करते हुए जुलाहा जंगल में सियारों के डेरों के पास गड्ढा खोदता है तथा सियारों को अंगारे की बरसात होने का झूठा आश्वासन देता है। इस कारण सारे सियार जुलाहे की बात पर भरोसा करते हुए गड्ढे में छिप जाते हैं, परंतु जुलाहा छल से 30 सियारों के सिर काटकर राजा के सामने प्रस्तुत करता है। दूसरे आदेश को पूरा करने के लिए जुलाहा शावकों को पुए (एक प्रकार की खाद्य सामग्री) खिलाकर उनका पेट भरता है और शेरनी के आने पर जुलाहा उसे पूरी बात बताता है। शेरनी के अनुसार जुलाहा ने उसके भूखे बच्चों को पुए खिलाकर नेक कार्य किया है। अतः वह अपना दूध जुलाहे को सहर्ष दे देती है ताकि जुलाहा अपनी जान बचा सके। इस प्रकार 30 सियारों के सिर और शेरनी का दूध देकर जुलाहा अपने प्राणों की रक्षा करता है।

धुरवा लोककथा 'चिड़ियों से मित्रता' मारेंगा गाँव में रहने वाले फगनू नाम के बालक पर आधारित है, जिसके पिता नहीं हैं। अपनी गरीबी दूर करने के लिए उसकी माँ क्षमता से अधिक मेहनत-मजदूरी करती है। इसे देखकर फगनू स्वयं खेती करने के बारे में सोचता है। अपनी जमीन न होने के कारण वह जंगल की जमीन को साफ करके वहीं खेती करने का निश्चय करता है। उसके पास बीज खरीदने के लिए पैसे नहीं थे। वह साहूकार के पास मदद मांगने जाता है, परंतु साहूकार उसकी मदद करने के लिए मना कर देता है। इसी समय उसकी माँ को एक रोचक विचार आता है। वह लोहार से थोड़ा-सा लोहा और जुलाहे से सूत लाकर एक जाल बनाती है। उस जाल को लेकर फगनू प्रतिदिन जंगल में चिड़ियाँ पकड़ता और बाजार में उन्हें बेचकर उससे मिले पैसों से बीज खरीदता है। एक दिन चिड़ियों ने उसके ऐसा करने का कारण पूछा तो फगनू की मजबूरी सुनकर चिड़ियों ने उसे खुद बीज लाकर देने का वादा किया। कुछ दिनों के बाद खेती के लिए आवश्यक हल-बैल खरीदने के लिए फगनू साहूकार के पास गया, परंतु उसने मना कर दिया। इस स्थिति में भी चिड़ियों ने उसकी पुनः मदद की और उसे आवश्यकता से अधिक

धान दिया, जिसे बेचकर वह हल-बैल खरीद सके। अपनी मेहनत से फगनू का परिवार गाँव में सबसे अमीर परिवार बन जाता है तथा धनी होने के बाद भी चिड़ियों से उसकी मित्रता बनी रहती है।

संथाल लोककथा 'तोता और राजा' झूठ और सच के द्वंद्व पर आधारित है। राजा के उपवन में एक आम के पेड़ पर एक तोते का घोंसला था। एक बार तोते को कहीं से एक सोने की अशर्फी मिली थी, जिसे उसने राजा को दे दी। इस अशर्फी के लिए उसे राजा ने कोई धन्यवाद या उपहार नहीं दिया। राजा ने अपने सभासदों को कहा कि यह अशर्फी उसके पुरखों की संपत्ति है। जब तोते ने इस झूठ का कारण पूछा तो राजा ने कहा कि अगर लोग यह जानते कि यह अशर्फी उसे किसी तोते ने दी है तो वे हँसते। राजा जो कहेगा वही सच माना जाएगा, इसलिए लोगों ने राजा की बात को सच माना। इस बात से आहत होकर तोता पेड़ की सबसे ऊँची डाली पर बैठकर गाना गाने लगा। वह उस गाने में राजा को मिली अशर्फी की सच्चाई बताता है। राजा तोते को मारने के लिए पहले नौकरों को भेजता है, परंतु वे असफल हो जाते हैं। तोते के गाने से परेशान होकर अंततः राजा स्वयं उसे मारने आता है। संयोग से गुलेल से निकला कंकड़ पेड़ की डाली से टकराकर वापस राजा को लग जाता है, जिससे राजा की मृत्यु हो जाती है।

लोककथाओं का विश्लेषण

उक्त लोककथाओं का विश्लेषण उत्तर मानवतावादी सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत किया गया है। उत्तर मानवतावाद एक दार्शनिक परिप्रेक्ष्य है, जो मनुष्यों द्वारा मानवेतर जीवों और वस्तुओं को परिभाषित करने के पारंपरिक मानव सर्वोच्चतावादी दृष्टिकोण को चुनौती देते हुए पर्यावरण, तकनीकी और मानवेतर जीवों एवं संसाधनों की सत्ता को पुनर्परिभाषित करता है। यह विश्व में मानवेतर जीवों और वस्तुओं को मनुष्य द्वारा स्वयं को केंद्र में रखते हुए देखने, समझने, वर्णित करने तथा निर्वचन करने के अभ्यास को अप्रासंगिक मानते हुए इसकी आलोचना करता है। (वोल्फ, 2013) यह दृष्टिकोण मानव तथा मानवेतर जीवों के संबधों को मनुष्यों द्वारा बनाए गए पदानुक्रम में देखने के बजाय मानवेतर जीवों की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार करते हुए एक नया विकल्प प्रस्तुत करता है। (ब्रैडोटी, 2013) इस दृष्टिकोण के आलोक में विश्लेषण के दौरान शोधार्थी द्वारा मानव-मानवेतर जीव अंतःक्रिया संबंधित प्रकरणों को चुना गया। इन प्रकरणों में दोनों तरह के पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं, संवाद, द्वंद्व की स्थिति में निर्णय और स्वतंत्र सत्ता के रूप में कार्य व्यवहार का अध्ययन करते हुए लोककथाओं में प्रकृति-मनुष्य के संबंधों की प्रस्तुति की विवेचना की गई है।

लोककथाओं में प्रकृति-मनुष्य के संबंधों की प्रस्तुति

लोककथाओं में प्रायः प्राकृतिक वातावरण की पृष्ठभूमि में मानव तथा मानवेतर पात्र आपस में अंतःक्रिया के माध्यम से 'संबंधों की पारिस्थितिकी' का निर्माण करते हैं। (डोका, 2022) लोककथाओं की विषयवस्तु का विश्लेषण करने पर पाया गया कि इसमें मानव-मानवेतर जीव संबंधों की प्रस्तुति मुख्य रूप से हुई है। लोककथाओं में इस संबंध की प्रस्तुति के दो आयाम हैं। प्रथम, मानवेतर जीवों का मानवीकरण किया गया है। द्वितीय, उन्हें मानवेतर जीव समुदाय की तरह रखा गया है। इस रूप में उनका

मानव से पारस्परिक संबंध और संघर्ष दोनों को दर्शाया गया है।

मानवेतर जीवों का चरित्र-चित्रण

मनुष्यों द्वारा अपने अनुभव और कल्पना के आधार पर पारंपरिक ज्ञान के रूप में लोककथाओं की निर्मिति की गई है। इनमें मानव के अतिरिक्त मानवेतर जीवों की भूमिका और स्वतंत्र अस्तित्व का विशेष महत्व है। मानव अपने परिवेश और पृष्ठभूमि के अनुरूप जीव-जंतु, वनस्पति, अलौकिक शक्ति, राक्षस जैसे मानवेतर तत्वों या प्राणियों को लोककथा में सम्मिलित करता है। लोककथाओं के माध्यम से मानव मानवेतर प्राणियों में अपनी भाषा, भाव, व्यवहार, अनुभव, आकांक्षाओं को सामाजिक मानदंडों के प्रतिबिंब के रूप में प्रस्तुत करता है। (चैंबर्स और बाउमन, 1987) इसके लिए लोककथाओं में पशुओं को मानव जैसे गुणों तथा व्यवहारों से युक्त किया जाता है। इस प्रक्रिया में भाषा की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लोककथाओं में मनुष्यों ने पशुओं को संवाद हेतु माध्यम के रूप में अपनी भाषा प्रदान की है। इसके लिए मानवेतर जीवों द्वारा मानवों जैसी भावनाओं, व्यवहारों, गुणों और गतिविधियों को दर्शाया गया है। यह प्रवृत्ति चयनित लोककथाओं में भी दिखती है। उदाहरण के लिए, 'हिरणी का छउवा' में हिरणी के रूप में एक पशु मनुष्य के रूप में जन्में बच्चे को अपना दूध पिलाती है और बच्चे के थोड़ा बड़े होने पर उसे 'मनुष्यों का भोजन' खाने के लिए प्रेरित करती है। मनुष्य-पशु के मध्य भावात्मक समानता को दर्शाने के लिए डर, क्रोध, उत्सुकता, आशंका, दुःख और खुशी जैसे भावों को हिरणी के पात्र में समावेशित किया गया है। चयनित लोककथाओं में दर्शाया गया है कि पशु भी भोले, विश्वासी और मददगार हो सकते हैं। 'हिरणी का छउवा' और 'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में बच्चों के लालन-पालन की प्रक्रिया को दृढ़ता से संबोधित किया गया है। 'चिड़ियों से मित्रता' लोककथा में मनुष्य-पशु के मध्य 'मित्रता' को प्रस्तुत किया गया है। यह लोककथा 'मित्रता' के संप्रत्यय को मानवीय सामाजिक संबंधों से परे प्रकृति की दो प्रजाति, मनुष्य और पशु के मध्य परिभाषित करती है। 'राजा और तोता' लोककथा में स्वाभिमानी, चतुर, अधिकारबोध और निर्भयी पात्र के रूप में तोते का वर्णन किया गया है। इन चयनित लोककथाओं में पशुओं के उन सभी गुणों या व्यवहारों को सूक्ष्मता से वर्णित किया गया है, जिसे प्रायः मनुष्यों के व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन में समझा जा सकता है।

मानवेतर जीव जगत की स्वाभाविक विशेषताओं की प्रस्तुति

फीनबर्ग और अन्य (2012) ने स्पष्ट किया है कि वर्तमान अकादमिक विमर्श में मानव और मानवेतर प्रजातियों के अस्तित्व और अंतःक्रिया को समझने के लिए 'संबंधों के जैव केंद्रित जाल' की संकल्पना की निर्मिति हुई है। इसमें 'मानव' और 'पशु' को एक-दूसरे से भिन्न किंतु समान वर्ग माना गया है। अर्थात यह माना गया है कि मानव और मानवेतर जीवों में समानताएँ तथा विषमताएँ सदैव उपस्थित रहेंगी। भौतिक अवस्था, अस्तित्व, गुण-अवगुण, संवेदना, खान-पान और व्यवहार की दृष्टि से पशु, मनुष्यों से भिन्न होंगे, लेकिन कोई किसी से श्रेष्ठ या कमजोर नहीं होगा। इस दृष्टि से जब चयनित

लोककथाओं का विश्लेषण करते हैं तो ज्ञात होता है कि लोककथाएँ मनुष्य और पशु के संबंधों को आपस में जोड़ते हुए एक पारिस्थितिकी का निर्माण करती हैं।

इस पारिस्थितिकी में पशुओं की अस्मिता को उचित स्थान प्रदान किया गया है। इसके लिए उन्हें उनकी जीवजातीय विशेषताओं के साथ प्रस्तुत किया गया है। उदाहरण के लिए, लोककथा 'हिरणी का छउवा' में हिरणी की प्रस्तुति देख सकते हैं— 'उसने स्नेह से अपने छउवे को चाट-चाट कर प्यार जताया' और हिरणी घास-पात चरकर आती है।' यहाँ 'चाट-चाट कर प्यार' करना और 'घास-पात' चरना मानवेतर विशेषताएँ हैं। इसी तरह 'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में सियार तथा शेरनी के जातीय गुणों को दर्शाया गया है। जुलाहे के आसमान से आग की बारिश की भविष्यवाणी पर विश्वास करने के बाद सियारों के मुखिया ने 'हुआँ-हुआँ' करके अपने सभी साथी सियारों को बुलाया। शेरनी अपने शावकों को दुलार कर 'शिकार' पर चली गई। 'चिड़ियों से मित्रता' में चिड़ियों के मौलिक गुण 'उड़ना' तथा 'चुगना' पर विशेष बल दिया गया है। इसके अतिरिक्त चिड़ियों द्वारा धान लाने के क्रम में उनकी शारीरिक विशेषताओं और सीमाओं का भी ध्यान रखा गया है— "...चिड़ियाँ अपने मुँह में धान का एक-एक दाना दबा कर लायीं और फगनू के घर के आँगन में छोड़ गयीं।" उक्त गतिविधियाँ मनुष्य की गतिविधियों से अलग हैं, जो लोककथाओं में पशुओं की प्रस्तुति को मानवेतर और विशिष्ट बनाती हैं। इसलिए पाठक या श्रोता मनुष्य और पशु में मौलिक भेद करते हुए पशुओं की पारिस्थितिकी में विशिष्ट भूमिका को संज्ञान में लेगा। इसके विपरीत यदि लोककथाओं में प्रचुर मात्रा में मानवीय गुणों को पशुओं में संपोषित किया जाए अथवा मनुष्य और पशु के मध्य अंतर को पूर्ण रूप से समाप्त कर दिया जाए तो इस परिस्थिति में 'पशु' पात्र का कोई मूल्य या औचित्य नहीं रह जाएगा।

लोककथाओं में मानव की सर्वोच्चता

'हिरणी का छउवा' लोककथा में बच्चे के लालन-पालन की प्रक्रिया को दृढ़ता से संबोधित किया गया है। इस लोककथा में राजा छउवा की सच्चाई जानने के लिए उसे कैद कर लेता है और हिरणी को अपनी संतान हेतु व्याकुल होकर खोजने जाना पड़ता है। इस दृश्य में मनुष्य को मानव-मानवेतर जीव संबंधों की पारिस्थितिकी में शक्ति के नियंत्रक के रूप में दर्शाया गया है। 'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में जुलाहे के संदर्भ में सियारों को लगा कि आसमान से बरसने वाले अंगारों से उन्हें बचाने के लिए जुलाहा गड्ढा खोद रहा है इसलिए सियारों ने जुलाहा को 'परोपकारी' समझा। वहीं शेरनी के अनुसार भूखे शावकों को पुए खिलाकर जुलाहे ने 'बड़ा नेक काम किया है।' इस तरह से इस लोककथा में मनुष्य द्वारा पशुओं के प्रति सकारात्मक और नकारात्मक व्यवहारों की प्रस्तुति मनुष्य की सर्वोच्चता को दर्शाती है। 'चिड़ियों से मित्रता' लोककथा में मानव-मानवेतर जीवों के मध्य 'मित्रता' जैसे विषय को स्थापित किया गया है। असहाय फगनू को चिड़ियों से मदद मिलती है— "...तो ऐसा करो तुम हमें पकड़ कर बेचना बंद कर दो, बदले में हम आज शाम तक इतना धान तुम्हारे घर पहुँचा देंगी कि तुम उससे आराम से खेती कर सकोगे"— और उसका परिवार गाँव

का सबसे धनी परिवार बन जाता है। फसल आने के बाद चिड़ियाँ उसके खेत में दाना चुगने नहीं आती थी, क्योंकि खेती के लिए बीज चिड़ियों ने ही दिए थे। यह लोककथा 'मित्रता' के संप्रत्यय को मानवीय सामाजिक संबंधों से परे मानव-मानवेतर जीवों के मध्य परिभाषित करती है। परंतु मित्रता के इस संबंध में मनुष्य को एक लाभार्थी के रूप में दर्शाया गया है, जो अपने ही समाज में वर्चस्व तथा अस्तित्व की लड़ाई लड़ने के लिए चिड़ियों को एक 'सहायक' के रूप में मित्र बनाता है।

'राजा और तोता' लोककथा में स्वाभिमानी, चतुर, अधिकार बोध एवं निर्भयी पात्र के रूप में तोते को चित्रित किया गया है— "लेकिन मैं सब को सच बता कर रहूँगा, क्योंकि जब मैंने आपको यह अशर्फी दी है तो आपको मुझे इसका श्रेय देना ही चाहिए, भले ही मैं तोता हूँ तो इससे क्या होता है? व्यक्ति अपने कर्म से बड़ा होता है, जाति, धर्म या समुदाय से नहीं, आप राजा हैं, आपको यह बात समझनी चाहिए।" स्पष्ट है कि तोते को न केवल मनुष्य प्रजाति के जाति, धर्म या समुदाय का ज्ञान था, अपितु उसे राजा की नैतिक जिम्मेदारियों और न्याय की भी समझ थी। परंतु इसमें राजा को निर्दयी और अभिमानी चरित्र के तौर पर चित्रित किया गया है, जो मानवेतर जीवों को सम्मान तथा अधिकार के योग्य नहीं समझता है।

उपर्युक्त सभी लोककथाओं में मानव को मानव-मानवेतर जीव संबंध की पारिस्थितिकी में शक्तिधारक के रूप में दर्शाया गया है, परंतु यह शक्तिधारक अपने वर्चस्व, अस्तित्व, सत्य की पहचान तथा मौलिक आवश्यकताओं के लिए मानवेतर जीवों पर आश्रित है।

मानव-मानवेतर जीव जगत के मध्य जैविक व सामाजिक समानता

लोककथाओं के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि मनुष्य व पशु के मध्य संबंधों को प्रस्तुत करने के दौरान दोनों जीव जातियों में उभयनिष्ठ जैविक विशेषताओं का समाजीकृत रूप प्रस्तुत किया गया है। उदाहरण के लिए, 'हिरणी का छउवा' लोककथा में हिरणी के पात्र में गर्भावस्था, स्तनपान तथा शिशु के लालन-पालन में मातृत्व की भूमिका को चित्रित किया गया है। लोककथा के अनुसार, हिरणी मनुष्य रूपी बालक को जन्म देती है। हिरणी यह विशेष ध्यान रखती है कि उस बच्चे का ठीक वैसा ही पालन-पोषण हो जैसे मनुष्य अपने बच्चों का करते हैं। 'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में शेरनी अपने शावकों को प्यार से बुलाती है— "आओ बच्चों दूध पी लो।", 'चिड़ियों से मित्रता' में चिड़ियों को अनाज और बीज की समझ है। यह समझ मनुष्य के अस्तित्व के लिए एक मूलभूत आवश्यकता है, जिससे वह अनाज उपजाता है और अपना पेट भरता है। इस प्रकार से 'खेती' वह संप्रत्यय है जिसकी समझ मानव जीवन के लिए आवश्यक है, परंतु इसकी समझ चिड़ियों को भी है। इस तरह के संबंध निरूपण में 'मिथकीय घटनाओं' का सहारा भी लिया गया है। इन घटनाओं द्वारा ही मनुष्य तथा पशु आपसी रिश्ते में बंधते हैं। 'हिरणी का छउवा' लोककथा में हिरणी संयोगवश राजा के पुत्र को अपने गर्भ में धारण करती है और मनुष्य रूपी बच्चे को जन्म देती है तथा लोककथा के अंत में राजा उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करता है। इस प्रकार, इस लोककथा में माता-पिता तथा पति-पत्नी के रिश्ते का उपयोग मनुष्य व पशु के मध्य संबंध स्थापित करने के लिए किया गया है।

'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में जुलाहे को देखकर शावक उससे परिचय पूछते हैं, जिसके जवाब में जुलाहा उन्हें उनका मामा बताता है। शावक जुलाहे की बातों पर विश्वास करते हुए उसके द्वारा लाए पुए खाते हैं और उसके साथ खेलने लगते हैं। इस लोककथा में मनुष्य व पशु के मध्य मामा तथा शेरनी और जुलाहे के संदर्भ में भाई-बहन के रिश्तों को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

आदिवासी लोककथाओं का शिक्षण-शास्त्रीय निर्वचन

फेरेन्ज-फ्लैट्ज (2016) ने रेखांकित किया है कि लोककथाएँ 'मानवीकरण करने का सांस्कृतिक अभ्यास' होती हैं, इसी के अनुरूप उक्त विश्लेषण में पाया गया कि उपरोक्त सभी लोककथाओं में मानवेतर जीवों में उन सभी गुणों या व्यवहारों को सूक्ष्मता से चित्रित किया गया है जिसे प्रायः मनुष्यों के व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण समझा जाता है। चयनित लोककथाओं में 'सभ्यता का ज्ञान', 'अस्तित्व के लिए संघर्ष', 'भोजन की आवश्यकता' तथा 'अस्मिता बोध' ऐसे पारस्परिक तत्व हैं, जो मनुष्य व पशु को पारिस्थितिकी में जोड़ते हैं। इस जुड़ाव के कारण मानव-मानवेतर जीवों के मध्य पारस्परिक संबंध स्थापित होता है, जिसके परिणामस्वरूप मनुष्य तथा पशुओं में समान भावना, संवेदना, गुण तथा व्यवहार जैसे संप्रत्यय उभरकर आते हैं। यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि मनुष्य, संसार की प्रत्येक वस्तु को मानवीय अर्थ प्रदान करने हेतु प्रयास करता है। इसके समानांतर यह भी आवश्यक है कि मानवेतर जगत को उनकी अनूठी विशेषताओं के साथ देखा जाए तथा मानव सर्वोच्चता की आड़ में प्रकृति का शोषण करने के बजाय सह-अस्तित्व और शाश्वत विकास को पोषित किया जाए। इसे ध्यान में रखते हुए शोध अध्ययन का यह खंड व्याख्यायित करता है कि कक्षा या अन्य अनौपचारिक अधिगम परिवेशों में लोककथाओं का निर्वचन कैसे किया जाए? इसके लिए भी उत्तर मानवतावादी सैद्धांतिक उपागम को आधार बनाया गया है।

उत्तर-मानवतावादी सिद्धांत साहित्य, कला तथा अन्य विमर्शों में मानव-मानवेतर जीव संबंधों को समझने के लिए उपयोग किए जा रहे मानव-सर्वोच्चतावाद के दृष्टिकोण को चुनौती देता है। मानव-सर्वोच्चतावाद के दृष्टिकोण से मनुष्य ने लोकाख्यानों के माध्यम से मानवेतर जगत का मानवीकरण किया है। अपनी इच्छा तथा सुविधानुसार उनमें मानव सदृश गुणों को आरोपित किया है। इसकी आलोचना करते हुए उत्तर-मानवतावादी सिद्धांत यह तर्क प्रस्तुत करता है कि पशुओं की अपनी अस्मिता तथा भावनात्मक अभिव्यक्ति होती है अर्थात लोककथाओं में पशुओं द्वारा प्रस्तुत किए जा रहे भाव, विचार तथा अभिव्यक्ति से पशुओं की अपनी अस्मिता की निर्मिति हो सकती है। इसलिए यह संज्ञान हमें लेने की आवश्यकता है कि दुःख, क्रोध, करुणा, स्नेह जैसे भाव केवल मनुष्य में ही नहीं पाए जाते हैं, पशु जगत में भी उपस्थित होते हैं। पशु जगत को मानव द्वारा नियंत्रित करने की प्रवृत्ति में निहित मानव-सर्वोच्चातावादी दृष्टिकोण को 'राजा चला स्वर्ग की ओर' लोककथा में देखा जा सकता है। इस लोककथा में जुलाहे के रूप में मनुष्य के अवसरवादी व्यवहार तथा नैतिकता के प्रश्नों को उजागर किया गया है। सियार द्वारा उसे 'परोपकारी' समझे जाने के बाद भी वह सियारों के प्राण लेता है,

जबकि शेरनी के साथ ईमानदारी से पेश आता है। यह द्वंद्व कथित उपयोगिता और खतरे के आधार पर पशुओं के प्रति अलग-अलग मानव दृष्टिकोण को रेखांकित करता है। यहाँ उत्तर-मानवतावादी सिद्धांत मानव-सर्वोच्चातावादी दृष्टिकोण को चुनौती देता है, क्योंकि इस परिस्थिति में एक पदानुक्रम का निर्माण हो रहा है, जहाँ मनुष्य द्वारा पशुओं को एक जीवित प्राणी में अंतर्निहित मूल्यों के बजाय अपनी उपयोगिता के आधार पर मापा जा रहा है। 'चिड़ियों से मित्रता' लोककथा में मानव-मानवेतर जीव आपसी सामंजस्य तथा सहयोग की भावना को दर्शाते हैं, जो पशुओं के ऊपर मनुष्य के प्रभुत्व के दृष्टिकोण को चुनौती देता है। अवलोकनीय है कि इस सकारात्मक चित्रण में भी शक्ति की गतिशीलता मनुष्य की ओर है, जिसमें मनुष्य को लाभार्थी के रूप में दर्शाया गया है।

चूँकि लोककथाएँ स्वाभाविक रूप से मानव द्वारा रचित साहित्य हैं, इसलिए लोककथाएँ स्वतः ही अपनी निर्मिति के आधार पर मानव-सर्वोच्चतावादी हो सकती हैं। अतः इस प्रवृत्ति को संज्ञान में लेते हुए, लोककथाओं की अंतर्वस्तु की उत्तर-मानवतावादी विवेचना उन्हें शिक्षण की ऐसी सामग्री बना सकती है, जिससे वे मानव व प्रकृति के सहअस्तित्वपूर्ण संबंध को पोषित करें। इसके लिए शिक्षा से जुड़े हितधारकों को निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना होगा—

1. लोककथाओं को विद्यालयी विषयों के पाठ्यक्रमों का घटक बनाया जाए। इसे केवल नैतिक शिक्षा या मूल्य शिक्षा तक सीमित न रखकर इसके द्वारा जीवन कौशलों के विकास, पर्यावरण शिक्षा, भाषा तथा सामाजिक विज्ञान के विषयों की शिक्षा से भी जोड़ा जाए।
2. विद्यार्थी तथा शिक्षक विद्यालयी विषयों के परिप्रेक्ष्य में लोककथाओं की प्रासंगिकता को समझ सकें, इसके लिए उन्हें स्थानीय समुदाय से लोककथाओं के एकत्रीकरण का भी कार्य सौंपा जाए। इससे स्थानीय स्तर की लोककथाओं को अधिगम संसाधन के रूप में विकसित करने में सहयोग प्राप्त होगा। साथ ही, इस प्रकार की लुप्त हो रही लोककथाओं को पुनः संरक्षित एवं संवर्धित किया जा सकता है।
3. शिक्षक लोककथाओं में वनस्पति तथा पशु जगत की उपादेयता को केवल मानव समुदाय के संदर्भ में न दर्शाएँ, बल्कि मानवेतर जगत की स्वतंत्र तथा सामान्य सत्ता को स्वीकार करने पर बल दें। इससे मानव और मानवेतर जगत का जुड़ाव जैविक पदानुक्रम से निर्मित न होकर जैविक विविधता पर आधारित होगा तथा लोककथा सुनने और सुनाने वाला मानव-मानवेतर जीवों को पारिस्थितिकीय साहचर्य के लिए एक-दूसरे के पूरक के रूप में समझ सकेंगे।
4. शिक्षकों से लोककथाओं को पढ़ाने तथा उनका निर्वचन करने के दौरान विद्यार्थियों के समक्ष जीव-जगत से संबंधित रूढ़िवादी दृष्टि को प्रस्तुत करने से बचने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए, कुछ पशुओं को लालची, चालाक, धूर्त के रूप में प्रस्तुत करना जीव जगत की स्वतंत्र सत्ता के प्रति न्याय नहीं है। हमें यह भी संज्ञान में लेना होगा कि मानवीय व्यवहारों की प्रतीकात्मक प्रस्तुति के लिए ऐसे निरूपण किए गए हैं।

5. लोककथाओं में निहित सामाजिक-सांस्कृतिक आयामों, जिसमें भेदभाव, शोषण, वर्चस्व और हिंसा आदि सम्मिलित हैं, उन पर भी चर्चा करते हुए शिक्षकों को विद्यार्थियों के समक्ष वैकल्पिक एवं शाश्वत विकास वाली दृष्टि से परिचित कराना होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में इक्कीसवीं सदी की आवश्यकताओं और चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए समग्र और बहु-विषयक शिक्षा (पृ. 57), पाठ्यक्रम में संस्कृति तथा मूल्यों का समावेशन (पृ. 4), 'ऑर्गेनिक लिविंग', पर्यावरण शिक्षा तथा पर्यावरण संबंधी जागरूकता (पृ. 23) जैसे समसामयिक विषयों पर विशेष रूप से बल दिया गया है। इसके लिए लोककथाएँ एक महत्वपूर्ण संसाधन हैं। पाठ्यक्रम में संस्कृति और मूल्यों के समावेशन की प्रक्रिया में मानवेतर जीवों के जीव-जगत, अधिकार तथा कल्याण के विषय को प्रासंगिक रूप से समझने के लिए लोककथाओं को शैक्षणिक संसाधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। कक्षा शिक्षण के दौरान लोककथाओं के प्रयोग द्वारा विद्यार्थी विभिन्न संस्कृतियों के संदर्भ में मानव तथा मानवेतर जीवों की पारिस्थितिकी तथा जैविक संबंधों को तुलनात्मक रूप से विश्लेषित करते हुए आलोचनात्मक चिंतन कौशल को विकसित कर पाएँगे। विभिन्न समाजों की विविध लोककथाओं को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने से सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के साथ-साथ मानव-मानवेतर जीवों के संबंधों की अधिक समावेशी समझ को बढ़ावा मिलेगा। उत्तर मानवतावादी सैद्धांतिक दृष्टिकोण से लोककथाओं की विवेचना करने पर पारिस्थितिकी तंत्र में मानवेतर जीवों की भूमिका तथा प्रकृति पर मानवीय गतिविधियों के प्रभाव को समझना सरल हो जाएगा। इससे विद्यार्थी पर्यावरण, संस्कृति तथा मानवेतर जीवों एवं संसाधन के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण विकसित करने में सक्षम होंगे।

इस दिशा में एक महत्वपूर्ण उदाहरण रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा वर्ष 2024 में प्रकाशित *मल्हार* नामक पाठ्यपुस्तक में देखा जा सकता है। इस पुस्तक में यथासंभव लोकविधाओं और लोकसाहित्य को स्थान दिया गया है। उदाहरण के लिए 'गोल' नामक पाठ जो हॉकी खिलाड़ी मेजर ध्यानचंद की जीवनी का अंश है, के अंतर्गत आदिवासी खेल दांडी या गोठा का विवरण देकर विद्यार्थियों से अन्य स्थानीय खेलों पर विचार-विमर्श करने को कहा गया है। ऐसे ही 'पहली बूँद' नामक पाठ में भी स्थानीय वाद्य यंत्रों की खोज करने से संबंधित परियोजना कार्य सुझाया गया है। इस पुस्तक में एक पूरा पाठ 'सत्रीय और बिहू नृत्य' पर ही आधारित है। इस शोधपत्र में जिस उत्तर मानवतावादी दृष्टिकोण पर बल दिया गया है, उसका सकारात्मक प्रयोग 'हार की जीत' लोककथा में देखा जा सकता है। इस पाठ में विद्यार्थियों को सुल्तान नामक घोड़े की दृष्टि से लोककथा के पुनर्कथन और विचार-विमर्श का कार्य दिया गया है। ऐसे ही 'पेड़ों की बात' पाठ में वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु के प्रयोगों का वर्णन करते हुए वनस्पति जगत की संवेदनशीलता को केंद्र में रखा गया है। *मल्हार* पुस्तक जैसी ही हमें अन्य पुस्तकों में भी लोकविधाओं और साहित्य को सम्मिलित करने की आवश्यकता है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों को मानवेतर जीव जगत को तद्नुभूतिपूर्ण ढंग से समझने का अवसर उपलब्ध कराया जा सकता है।

संदर्भ

इस्लाम, एम. 1985. *फोकलोर, दी पल्स ऑफ दी पीपल — इन दी कॉन्टेक्स्ट ऑफ इंडिक फोकलोर*. कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी.

एमडोका, डब्ल्यू. 2022. एन्थ्रोपोमोर्फिज्म एंड एन्थ्रोपोसेंट्रिज्म — ह्यूमन-एनिमल ऑन्टोलॉजी एंड एनवायरमेंट दी क्राइटेरियन — *एन इंटरनेशनल जर्नल इन इंग्लिश*. 13(6). पृष्ठ 132–156.

एल्विन, वी. 2008. *जनजातीय मिथक — उड़िया आदिवासियों की कहानियाँ*. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

कासिमोवा, आर.एस. और अन्य. 2020. पेडागॉजिकल वैल्यू ऑफ फोकलोर. *यूरोपियन प्रोसीडिंग्स ऑफ सोशल एंड बिहेवियरल साइंसेज*. https://doi.org/10.15405/epsbs.2020.01.87

गुप्ता, आर. 2018. *आदिवासी साहित्य यात्रा*. राधाकृष्ण प्रकाशन.

गुप्ता सी.एस. *फोकलोर — लिटरेचर, आर्ट क्राफ्ट एंड म्यूजिक*. अप्रैल 2016 को http://nsdl.niscair.res.in/jspui/bitstream/ 123456789/338/1/PDF%20Folklore.pdf. Web. से प्राप्त किया गया.

चैंबर्स, आर. और आर. बाउमन. 1987. स्टोरी, परफॉरमेंस एंड इवेंट — कॉन्टेक्स्टुअल स्टडीज ऑफ ओरल नैरेटिव. *पोएटिक्स टुडे*. 8(3/4). पृष्ठ 698. https://doi.org/10.2307/1772579

चन्ना, एस. 1994. *अंडरस्टैंडिंग सोसाइटी, कल्चर एंड चेंज*. ब्लेज पब्लिशर्स.

फीनबर्ग, आर., पी. नैसन और एच. श्रीधरन. 2012. इंट्रोडक्शन — ह्यूमन-एनिमल रिलेशन. *एनवायरमेंट एंड सोसाइटी*. 4. पृष्ठ 1–4. https://www.jstor.org/stable/43297033.

फेरेन्ज-फ्लैट्ज, सी. 2016. ह्यूमनाइजिंग दी एनिमल, एनिमलाइजिंग दी ह्यूमन — हुस्सेर्ल ऑन पेट. *ह्यूमन स्टडीज*. 40(2). पृष्ठ 217–232. https://www.jstor.org/stable/44979856

बेन-अमोस, डी. 1971. टुवर्ड्स ए डेफिनिशन ऑफ फोकलोर इन कॉन्टेक्स्ट. *जर्नल ऑफ अमेरिकन फोकलोर*. 84 (331). पृष्ठ 3. https://doi.org/10.2307/539729

ब्रोनर, एस.जे.बी. (संपादक). 2005. फोकलोर एज मिरर ऑफ कल्चर. *मीनिंग ऑफ फोकलोर: दी एनालिटिकल एसेज ऑफ एलन डंडेस*. प्रथम संस्करण, अंक 11. पृष्ठ 55. यूटा स्टेट यूनिवर्सिटी प्रेस. https://doi.org/10.5860/choice.45-5990

ब्रैडोटी, आर. 2013. *दी पोस्टह्यूमन*. जॉन विले एंड संस.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2022. भारत — सांस्कृतिक विविधता में एकता (प्रथम सं.). (नवंबर). [ईबुक]. https://ncert.nic.in/pdf/publication/otherpublications/BharatSaanskritikVividhtaMeEkta.pdf.

———. 2024. *मल्हार*. रा.शै.अं.प्र.प., नई दिल्ली.

वोल्फ, सी. 2013. *व्हाट इज पोस्टह्यूमनिज्म?* यूनिवर्सिटी ऑफ मिनेसोटा प्रेस.

शिक्षा मंत्रालय. 2020. *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. शिक्षा मंत्रालय. भारत सरकार, नई दिल्ली.

सिम्स, एम.सी. और एम. स्टीफंस. 2005. *लिविंग फोकलोर — इंट्रोडक्शन टू दी स्टडी ऑफ पीपल एंड देयर ट्रेडिशन्स*. https://muse.jhu.edu/chapter/271294/pdf

सिंह, एस. 2009. *भारत के आदिवासी क्षेत्रों की लोककथाएँ* (सातवाँ संस्करण). राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली.

हुडा, एस. 2021. दी मुंडा एन एथनिक कम्युनिटी इन दी साउथ वेस्ट कोस्टल रीजन ऑफ बांग्लादेश. [जारी]. पृष्ठ 1–16. https://doi.org/10.35248/2375-4435.21.9.224